

सलेम नगरपालिका

बनाम

पी. कुमार और अन्य

(2014 की दीवानी अपील संख्या 9-11)

15 नवंबर, 2018

[अरुण मिश्रा और विनीत सरन, न्यायमूर्तिगण]

भूमि कानून और कृषि किरायेदारी:

तमिलनाडु संपदा (उन्मूलन और रैयतवारी में परिवर्तन) अधिनियम, 1948: धाराएं 3, 11, 14-ए और 64 - वे भूमि जिन पर रैयत, रैयतवारी पट्टा पाने का हकदार हैं - तथ्यों के आधार पर, तत्कालीन जमींदार द्वारा वादी के हक के पूर्वाधिकारी के पक्ष में दिए गए विभिन्न पट्टे - पट्टा विलेख क्षेत्र टैंक तट के किनारे की बंजर भूमि सूखी और टैंक तट का ऊपरी हिस्सा सूखी भूमि का हिस्सा था - पट्टा नवंबर के महीने से अगले वर्ष जून तक के लिए दिया गया था, जो जुलाई में बारिश शुरू होने से पहले समाप्त हो जाता था क्योंकि भूमि जलमग्न हो जाया करती थी - वादी का मामला यह है कि जब 1948 का अधिनियम लागू हुआ, तब उसका हक के पूर्वाधिकारी उस भूमि पर लगातार काबिज रहा - इसके अनुसरण में, पूरे गांव को, जिसमें वादी की भूमि भी शामिल थी, राज्य सरकार द्वारा अपने कब्जे में ले लिया गया- धारा 11 के तहत रैयतवारी पट्टा दिए जाने के लिए हक के पूर्वाधिकारी और मूल वादी द्वारा दायर किए गए आवेदन - इस आधार पर खारिज किए गए कि भूमि रैयती भूमि नहीं थी - इसी बीच, राज्य सरकार ने नए बस पड़ाव के निर्माण के लिए वादी की भूमि सहित कुछ भूमि अपीलकर्ता को सौंप दी - वादी द्वारा अपनी भूमि के संबंध में राज्य सरकार और परिवहन निगम के साथ-साथ अपीलकर्ता के खिलाफ मालिकाना हक (स्वामित्व) की घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा के लिए दायर किए गए वाद - विचारण न्यायालय द्वारा वाद डिक्री किए गए, हालांकि प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा इन्हें खारिज कर दिया गया - इसके खिलाफ दायर दूसरी अपीलें उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार कर ली गईं और विचारण न्यायालय के आदेश को बहाल कर दिया गया - अपील पर, यह माना गया: पट्टों से यह

स्पष्ट है कि पट्टा विलेखों में शामिल क्षेत्र तालाब का हिस्सा था। धारा 3(16) में दी गई रैयती भूमि की परिभाषा के अनुसार, वह क्षेत्र स्पष्ट रूप से रैयती भूमि नहीं था, इसलिए हित के पूर्वाधिकारी या वादी को 'रैयती' भूमि धारक 'रैयत' नहीं कहा जा सकता था - रैयतवारी पट्टा दिए जाने के अभाव में और इस तथ्य को देखते हुए कि भूमि सामान्य उपयोग के लिए आरक्षित तालाब का हिस्सा थी, वादी को रैयतवारी पट्टा का दावा करने का कोई अधिकार अर्जित नहीं हुआ क्योंकि उसका पूर्वाधिकारी 'रैयत' नहीं था और विवादित भूमि 'रैयती भूमि' नहीं थी - इसके अलावा, वादी के विक्रेता के पास लगातार 12 वर्षों तक भूमि का कब्जा नहीं था - कब्जे के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष स्पष्ट रूप से विकृत है - अभिलेख पर राजस्व अभिलेख के रूप में ऐसा कोई सबूत नहीं है कि उन्मूलन की तिथि पर वादी का विक्रेता कब्जे में था और उसके बाद वादी किसी भी समय कब्जे में रहा था - इस प्रकार, वादी के विक्रेता या वादी को कोई भी रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने या वाद में डिक्री प्राप्त करने का कोई अधिकार, हक या हित अर्जित नहीं हुआ। इसके अलावा, धारा 64 जिसके तहत अस्थायी बेदखली/कब्जे की निरंतरता टूटने से मालिक, कब्जाधारी का अधिकार प्रभावित नहीं होना चाहिए, वादी को कोई मदद नहीं पहुँचाती है - इसके अलावा, भूमि का केवल एक हिस्सा ही नगरपालिका को दिया गया है, इसे उच्च न्यायालय द्वारा वादी के पक्ष में निष्कर्ष निकालने के लिए आधार नहीं बनाया जा सकता था ताकि मालिकाना हक को बल दिया जा सके - उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण पूरी तरह से अस्वीकार्य, असंधारणीय, विकृत और अवैध है - इस प्रकार, उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को अपास्त किया जाता है और प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय को बहाल किया जाता है - चूंकि विभिन्न कार्यवाहियों की बहुलता (बढ़ोत्तरी) हुई थी, इसलिए वादी पर एक लाख रुपये का हर्जाना लगाया गया, जिसे उच्चतम न्यायालय अभिलेख पर अधिवक्ता संगठन के कल्याण कोष में जमा किया जाना है - तमिलनाडु भू संपदा अधिनियम, 1908 - धारा 3(15), (16) - साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 114 - लागत।

तमिलनाडु राज्य बनाम रामालिंगा समिगल मैडम (1985) 4 एससीसी 10;
 डोकिसीला रामुलु बनाम श्री संगमेश्वर स्वामी वरु एवं अन्य (2017) 2 एससीसी
 69 ; ब्योहर राजेंद्र सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य 1970 आरएन 16

(उच्चतम न्यायालय); सर भीमेश्वर स्वामी वरुण मंदिर बनाम पेडापुडी कृष्ण मूर्ति
और अन्य एआईआर 1973 एससी 1299 – संदर्भित।

नजीर संदर्भ

(2017) 2 एससीसी 69	कंडिका 23	में संदर्भित
1970 आरएन 16 (सर्वोच्च न्यायालय)	कंडिका 41	में संदर्भित
एआईआर 1973 एससी 1299	कंडिका 44	में संदर्भित
(1985) 4 एससीसी 10	कंडिका 21	में संदर्भित

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2014 की दीवानी अपील संख्या 9-11 ।

द्वितीय अपील संख्या 2004 की 1025, 1027 और 1028 में मद्रास उच्च न्यायालय
के दिनांक 08.12.2010 के निर्णय और आदेश से।

के साथ

2014 की दीवानी अपील संख्या 12-14 ।

उपस्थित पक्षों के लिए अधिवक्तागण आर वेंकटरामनी, राकेश द्विवेदी, गुरुकृष्ण कुमार,
राजीव दत्ता, वी. गिरि, सलाहकार, विनोद कन्ना बी., ए. श्रीराम, सिद्धार्थ अय्यर, यशराज बुंदेला,
प्रवीण विगनेश, सुश्री पुरबित्रा मित्रा, के.वी. विजयकुमार, जी. शिवबालामुरुगन, वसंत कुमार, आर.
चंद्रचूड़, आर. अय्याम पेरुमल, सुश्री सी. रुबावती ।

न्यायालय का निम्नलिखित आदेश पारित किया गया:

आदेश

1. सलेम नगर पालिका और तमिलनाडु राज्य तथा अन्य मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा
8.12.2010 को पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर अपील में हैं, जिसमें तीनों द्वितीय
अपीलों का एक सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा निपटारा करते हुए प्रथम अपीलीय न्यायालय
द्वारा मुकदमों को खारिज करने के निर्णय और डिक्री को पलट दिया गया है और विचारण
न्यायालय के निर्णय को बहाल किया गया है।

2. वादी ने दावा किया कि प्रारंभ में, पट्टा 19.11.1940 को तत्कालीन जमींदार -
श्रीमती ज्ञानम्बल द्वारा एस. विजयरांगा मुदलियार के पक्ष में दिया गया था। यह पट्टा नवंबर
1940 से जून 1941 तक की अवधि के लिए था।

3. इसी तरह के पट्टे 19.11.1942 को, 1943 में और 1946 में दिए गए थे। पट्टा विलेख में क्षेत्र को "चिन्नेरी टैंक तट के किनारे की सूखी बंजर भूमि" और "चिन्नेरी टैंक तट का ऊपरी सूखा हिस्सा" के रूप में वर्णित किया गया था।

4. यह महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक पट्टा आठ महीने के लिए दिया गया था, जो प्रत्येक वर्ष नवंबर से अगले वर्ष जून तक चलता था और जुलाई में बारिश शुरू होने से पहले समाप्त हो जाता था, क्योंकि जमीन अक्सर जलमग्न रहती थी, क्योंकि यह चिन्नेरी बांध की ओर स्थित थी।

5. वादी ने दावा किया कि उसके पूर्ववर्ती मालिक, तमिलनाडु एस्टेट्स (उन्मूलन और रैयतवाड़ी में परिवर्तन) अधिनियम, 1948 (संक्षेप में "1948 का अधिनियम") के लागू होने के समय भी भूमि पर कब्जा बनाए हुए थे। यह अधिनियम 19.4.1949 को प्रकाशित हुआ था। धारा 1, 2, 4, 5, 7, 8, 58-ए, 62, 67, 68 19.4.1949 को लागू हुईं, जैसा कि 1948 के अधिनियम की धारा 1(4) के तहत प्रावधान किया गया था। राज्य सरकार ने अन्य धाराओं को निर्धारित तिथि यानी 19.12.1950 को लागू किया। इसके बाद, 1948 के अधिनियम के तहत अधिसूचित किए जाने पर संपूर्ण पल्लापत्ती गाँव राज्य के अधीन आ गया। इसके अनुसरण में, 12.1.1951 की कब्जा रसीद के माध्यम से सरकार ने पूरे गाँव का कब्जा ले लिया, जिसमें विवादित भूमि भी शामिल थी।

6. मूल वादी – स्वर्गीय पी.सी. पचियाप्पन ने एस. विजयरांगा मुदलियार से 4.91 एकड़ जमीन खरीदी थी। ये मुकदमे उक्त जमीन से संबंधित हैं।

7. यह ज्ञात हुआ है कि स्वर्गीय विजयरांगा मुदलियार ने 1948 के अधिनियम की धारा 11 के तहत रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने के लिए आवेदन किया था। यह आवेदन इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि भूमि रैयती भूमि नहीं थी और यह सामुदायिक भूमि के रूप में दर्ज थी। इसके बाद, उस क्षेत्र में बंदोबस्त किया गया और अंततः 21.12.1963 को राजपत्र में इसकी अधिसूचना प्रकाशित की गई। इसके बाद, पी.सी. पचियाप्पन ने 1948 के अधिनियम की धारा 11 के तहत नए निर्मित सर्वेक्षण संख्या 163 के लिए रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने हेतु आवेदन किया जो पुराने सर्वेक्षण संख्या 779 के अनुरूप था। विवादित भूमि के रैयतवारी पट्टा प्रदान करने की प्रार्थना को आदेश संख्या 5.11.1968 (डीओएस 739/68 (एफ-2)) द्वारा सहायक बंदोबस्ती अधिकारी केडीआईएस संख्या 737/1968 के माध्यम से अस्वीकार कर दिया गया था। 1959 में सर्वेक्षण और बंदोबस्ती में तैयार किए गए सर्वेक्षण भूमि पुस्तिका (प्रदर्श बी-2) में दर्ज

जानकारी के अनुसार, भूमि का कुल क्षेत्रफल 24.62 एकड़ था, जिसे अचुवन एरी (झील) के रूप में दर्ज किया गया था। अतः, इसका आवंटन नहीं किया जा सकता था।

8. पचियाप्पन द्वारा दायर रैयतवारी पट्टा के लिए दूसरा आवेदन 11.5.1971 के सरकारी आदेश के अनुसार अस्वीकृत कर दिया गया। पचियाप्पन ने पुनर्विचार आवेदन दायर किया। इसे भी 7.5.1973 के आदेश द्वारा इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि अधिकार अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि विवादित भूमि 'अचुवानेरी' का हिस्सा है, जो चतुर्थ श्रेणी का सिंचाई स्रोत है, जिसके अंतर्गत आर्द्र अयकुट पंजीकृत है और इसे इसके अंतर्गत आने वाले अयकुटदारों के हित में तालाब के रूप में रखा गया है। यह भी देखा गया कि पूरा क्षेत्र जलमग्न हो जाता है और विचाराधीन भूमि सिंचाई तालाब का हिस्सा है।

9. पिछली दो अस्वीकृतियों से बेपरवाह होकर, पचियाप्पन ने फिर से तीसरी बार 21.6.1982 को पट्टा जारी करने के लिए आवेदन किया। वह आवेदन अंततः 9.5.1984 को प्रदर्श पी-5 के माध्यम से अस्वीकृत कर दिया गया।

10. 23.2.1984 को, कार्यालय ज्ञापन 255 के अनुसार, राज्य सरकार के परिवहन विभाग ने सर्वेक्षण संख्या 163, जिसका क्षेत्रफल 24.62 एकड़ था, को सलेम नगरपालिका को नए बस पड़ाव के निर्माण के लिए सौंप दिया।

11. पचियाप्पन ने 20.12.1984 को सलेम के जिला मunsif न्यायालय में 1985 के ओ.एस. 34 के रूप में पंजीकृत एक दीवानी मुकदमा दायर किया था, जिसमें तमिलनाडु राज्य और अन्ना ट्रांसपोर्ट कॉर्पोरेशन के खिलाफ सर्वेक्षण संख्या 163 में से 4.91 एकड़ भूमि के संबंध में स्वामित्व की घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा की मांग की गई थी।

12. फिर उसी वादी द्वारा एक और दीवानी मुकदमा दायर किया गया, 22.12.1989 को केवल सलेम नगर पालिका के खिलाफ घोषणा और निषेधाज्ञा के लिए ।

13. इसके बाद, पचियाप्पन द्वारा 26.3.1992 को रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने के लिए चौथा आवेदन दायर किया गया। उन्होंने उत्तरदाताओं को संपत्ति के शांतिपूर्ण कब्जे और उपभोग में बाधा डालने से रोकने के लिए एक और 1992 की रिट याचिका संख्या 3932 दायर की।

14. 1992 की रिट याचिका संख्या 5642 में उन्होंने प्रार्थना की कि उत्तरदाता को रैयतवारी पट्टा प्रदान करने के आवेदन पर विचार करने का निर्देश दिया जाए। हालाँकि, दोनों रिट याचिकाएँ वापस ले ली गईं। इससे पहले, 1984 में दायर की गई रिट याचिका भी दीवानी मुकदमा दायर करने की स्वतंत्रता के साथ खारिज कर दी गई थी।

15. तीसरा मुकदमा, ओ.एस. संख्या 342/1996 (348/95) (पुनः क्रमांकित 2066/96) सलेम नगर पालिका, अन्ना परिवहन निगम और तमिलनाडु राज्य के विरुद्ध दायर किया गया था। उन्होंने तीसरे दीवानी मुकदमे में भी वही राहत मांगी है।

16. एस. विजयरंग मुदलियार को दिए गए विभिन्न पट्टों के बल पर, वह 1948 के अधिनियम की धारा 11 के तहत रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने के हकदार हो गए। वादी ने 1951 में वाद संपत्ति को खरीदने के लिए एक समझौता किया जो 29.9.1952 को बिक्री में परिणत हुआ। वाद संपत्ति कभी भी अचुवन एरी या इसके टैंक बंड की सामुदायिक भूमि का हिस्सा नहीं रही। इसके अलावा, अभिलेख के अनुसार अचुवन एरी का विस्तार केवल 15.00 एकड़ है। वादी वाद संपत्ति के वास्तविक कब्जे और उपभोग में रहा था। वर्ष 1982 में, वन विभाग ने वाद संपत्ति में अतिक्रमण करने का प्रयास किया और एक नर्सरी स्थापित की। वादी ने आपत्ति जताई और अतिक्रमण के खिलाफ तमिलनाडु सरकार से स्थगन आदेश प्राप्त किया। वन विभाग पीछे हट गया और उसे आगे के काम से रोक दिया गया। वादी ने अपने पक्ष में रैयतवारी पट्टा दिए जाने के लिए आवेदन भी दायर किए थे और 1940 के बाद से हित में उसके पूर्वाधिकारी ने प्रतिकूल कब्जे के बल पर भी अपने मालिकाना हक को निर्धारित किया था।

17. इससे पहले, वाद संख्या ओएस.34/1985 दोनों पक्षों की अनुपस्थिति में खारिज कर दिया गया था। इसकी बहाली के लिए आवेदन संख्या आई. ए. 583/94 लंबित था। वाद का कारण वर्ष 1940 में उत्पन्न हुआ, उसके बाद 1952 में, जब विक्रय विलेख निष्पादित किया गया और फिर वर्ष 1984 में। घोषणा और निषेधाज्ञा के अलावा, प्रश्नगत संपत्ति के सीमांकन के लिए भी प्रार्थना की गई थी।

18. 1985 के मुकदमे की बहाली के बाद, तीन मुकदमे 27.4.2000 को पारित एक सामान्य निर्णय और डिक्री द्वारा तय किए गए थे, जो विचारण न्यायालय, अपर जिला मुंसिफ, सलेम द्वारा पारित किया गया था। मुकदमे में डिक्री 27.4.2000 को दी गई थी। प्रथम अपीलीय न्यायालय अर्थात् प्रथम अपर जिला न्यायालय, सलेम ने दिनांक 30.1.2004 के निर्णय और डिक्री द्वारा अपीलें स्वीकार कर लीं। इससे असंतुष्ट होकर, तीन द्वितीय अपीलें, जो दायर की गई थीं, उन्हें आक्षेपित निर्णय और डिक्री द्वारा स्वीकार कर लिया गया है, जिससे विचारण न्यायालय के फैसले को बहाल कर दिया गया है।

19. उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष दिया है कि एस. विजयरंगा मुदलियार को दिए गए विभिन्न पट्टों पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है। बिक्री विलेख पर भी अवलंबना किया

गया है, दस्तावेज ए-1 से ए-4 पर उच्च न्यायालय ने अवलंबना किया है। उच्च न्यायालय ने उपरोक्त दस्तावेज ए-1 से ए-4 से संबंधित अभिलेख प्रस्तुत न करने के कारण अपीलकर्ताओं के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाले हैं। उच्च न्यायालय ने 12.1.1951 को कब्जा लेने के दस्तावेज बी-9 पर अविश्वास जताया है। कब्जे का निर्णय वादी के पक्ष में लिया गया है। उच्च न्यायालय ने सेलम नगर पालिका द्वारा परिवहन निगम को बस पड़ाव के लिए केवल 19.64 एकड़ भूमि सौंपने पर संदेह व्यक्त किया है, जबकि तमिलनाडु सरकार द्वारा सेलम नगर पालिका को पूरी 24.62 एकड़ भूमि दी गई थी। उच्च न्यायालय ने आगे कहा है कि पट्टा विलेखों में उल्लिखित तथ्यों के आधार पर वादी के विरुद्ध कोई रोक नहीं बनती है। उत्तरदाताओं ने यह भी स्पष्ट नहीं किया है कि 15 एकड़ के जलकुंड का क्षेत्रफल बढ़कर 24 एकड़ कैसे हो गया। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय ने प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय और आदेश को अपास्त कर दिया और विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश को बहाल कर दिया।

20. श्री राकेश द्विवेदी, श्री आर. वेंकटरमणि और श्री गुरुकृष्ण कुमार, अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने 1908 के अधिनियम और 1948 के अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों पर विचार नहीं किया है। उक्त अधिनियमों में निहित प्रावधानों के आधार पर जल टैंकों में कोई अधिकार सृजित नहीं किया जा सकता था। उन्होंने 1908 के अधिनियम की धारा 3(15) और 3(16) में रैयत और रैयती भूमि की परिभाषा पर अवलंबन किया है।

21. उक्त अधिनियम की धारा 3(16) में परिभाषित रैयती भूमि में विशेष रूप से तालाबों के तल और मेड़ शामिल नहीं हैं। यह भी तर्क दिया गया कि उच्च न्यायालय अधिनियम की धारा 11 के तहत 'रैयत पट्टा' प्राप्त करने के लिए पूर्ववर्ती हितधारक एस. विजयरंगा मुदलियार और मूल वादी द्वारा दायर की गई कार्यवाही की बर्खास्तगी के प्रभाव पर भी विचार करने में विफल रहा है। एस. विजयरंगा मुदलियार की रैयतवारी पट्टा प्रदान करने की प्रार्थना दिनांक 20.7.1953 के आदेश द्वारा अस्वीकृत कर दी गई थी। पचियाप्पन द्वारा की गई अन्य चार प्रार्थनाएँ भी वर्ष 1968, 1971, 1984 और 1994 में अस्वीकृत कर दी गईं। रैयतवारी पट्टा न दिए जाने की स्थिति में और वैसे भी, भूमि राज्य सरकार के पास ही रही। उच्च न्यायालय द्वारा वादी के कब्जे के संबंध में दिया गया फैसला भी गलत है और राजस्व प्रविष्टियों, बंदोबस्त दस्तावेजों और अन्य अधिकार अभिलेखों (1948 से 1995 तक) के विपरीत है। राजस्व अभिलेखों को अभिलेख में रखा गया है और उनमें से किसी में भी पचियाप्पन के

कब्जे की कोई प्रविष्टि नहीं है। 1952 में निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर, पच्चियाप्पन का नाम कभी भी पंजीकृत नहीं हुआ था। चूंकि पूर्ववर्ती एस. विजयरांगा मुदलियार का कोई स्वामित्व नहीं था, इसलिए स्वर्गीय पच्चियाप्पन उनसे कोई अधिकार, स्वामित्व या हित प्राप्त नहीं कर सकते थे। एस. विजयरांगा मुदलियार के स्वामित्व और स्वयं के स्वामित्व को सिद्ध करने में विफल रहने के कारण, वादी अपने पक्ष में डिक्री प्राप्त करने का हकदार नहीं था। इसके अलावा, यह भी तर्क दिया गया कि यद्यपि ऐसा मुकदमा 1948 अधिनियम के प्रावधानों के तहत वर्जित है, फिर भी यदि इसे रैयत के अधिकारों को स्थापित करने के लिए विचारणीय माना जाए, तो भी वादी घोषणा और निषेधाज्ञा प्राप्त करने के लिए अधिकार, स्वामित्व या हित सिद्ध करने में बुरी तरह विफल रहा है। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा मुकदमों को उचित रूप से खारिज कर दिया गया था। विद्वान अधिवक्ताओं ने तमिलनाडु राज्य बनाम रामलिंगा सामिगल मैडम (1985) 4 एससीसी के फैसले का भी हवाला दिया है। 10. यदि दस्तावेज ए-1 से ए-4 को सिद्ध मान भी लिया जाए, तो भी वादी इनसे भूमि पर अधिकार, स्वामित्व या हित सिद्ध करने के लिए कोई आधार प्राप्त नहीं कर सका। उच्च न्यायालय ने केवल प्रतिकूल अनुमान के आधार पर वादी के पक्ष में स्वामित्व प्रदान किया है, जबकि वादी अपना मामला साबित करने में बुरी तरह विफल रहा है। उन्होंने 1948 अधिनियम की धारा 14 ए पर भी अवलंबन किया है।

22. श्री राजीव दत्ता और श्री वी. गिरि, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, वादी की ओर से उपस्थित हुए और उन्होंने तर्क दिया कि एक बार जब दस्तावेज ए-1 से ए-4 सिद्ध हो जाते हैं, तो न केवल पूर्ववर्ती का, बल्कि वादियों का भी अधिकार, हक और हित सिद्ध हो जाता है। वादी के कब्जे के संबंध में तथ्य का निष्कर्ष परीक्षण न्यायालय द्वारा सही ढंग से दर्ज किया गया है। प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा सही ढंग से उलट दिया गया है। रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने का अधिकार सिद्ध हो चुका है। रैयतवारी पट्टा प्रदान करने के दावे का संबंधित अधिकारियों द्वारा उचित रूप से निर्णय नहीं किया गया है। दीवानी मुकदमे सुगम थे और उन्हें सही ढंग से डिक्री किया गया है।

23. वादी की ओर से यह भी तर्क दिया गया कि तालाब के क्षेत्रफल में अंतर को ठीक से स्पष्ट नहीं किया गया है और विचाराधीन क्षेत्र तालाब का हिस्सा नहीं है, बल्कि तालाब की परिधि पर स्थित है। इसलिए, एस. विजयरांगा मुदलियार को इसे पट्टे पर देने में 1908 के अधिनियम के तहत कोई रोक नहीं थी और चूंकि उन्हें रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने का अधिकार, स्वामित्व और हित प्राप्त हो चुका था, इसलिए वे 1952 में संपत्ति का विक्रय कर सकते थे।

कब्जे के संबंध में निर्णय भी तथ्य का प्रश्न है और परीक्षण न्यायालय द्वारा इस पर सही ढंग से पहुंचा गया है, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा सही ढंग से बहाल किया गया है। हस्तक्षेप का कोई मामला नहीं बनता है। दीवानी मुकदमे की वैधता के लिए, उन्होंने *डोकीसीला रामुलु बनाम श्री संगमेश्वर स्वामी वारु और अन्य* (2017) 2 एससीसी 69 के फैसले पर अवलंबना किया है। अंत में, उन्होंने तर्क दिया कि प्रतिकूल निष्कर्ष उच्च न्यायालय द्वारा सही ढंग से निकाला गया है।

24. सबसे पहले, हम भूमि की प्रकृति से संबंधित प्रश्न के निर्धारण पर विचार करते हैं क्योंकि अधिकार, स्वामित्व और हित का अर्जित होना 1908 और 1948 दोनों अधिनियमों के तहत इसी पर निर्भर करता है। वादी द्वारा अभिलेख पर रखे गए दिनांक 15.11.1940 के पट्टा विलेख (प्रदर्श ए-2) से यह स्पष्ट है कि भूमि चिन्नेरी तालाब तट के किनारे की बंजर सूखी भूमि, चिन्नेरी तालाब तल के ऊपरी सूखी भूमि, चिन्नेरी तालाब तट के किनारे की बंजर सूखी भूमि, चिन्नेरी तालाब तल के ऊपरी सूखी भूमि का हिस्सा थी और पट्टा फसली 1350, जो ग्रेगोरियन कैलेंडर वर्ष 1940 के तदनुरूप है, में नवंबर 1940 से जून 1941 तक प्रभावी होने के लिए दिया गया था। सामूहिक रूप से ए-2 के रूप में चिह्नित इसी तरह के अन्य पट्टे दिनांक 19.11.1942, 1943 और 1946 के हैं, जो नवंबर से जून के महीने से प्रभावी होने के लिए हैं। पट्टे 1908 के अधिनियम की धारा 51 के तहत शक्तियों के प्रयोग में दिए गए थे। पट्टों से यह स्पष्ट है कि विचाराधीन क्षेत्र को उक्त पट्टा विलेखों में विशिष्ट रूप से तालाब का हिस्सा बनने के लिए दर्शाया गया है।

25. इसके अलावा, अभिलेख में दर्ज राजस्व प्रविष्टियों की भरमार है जो दर्शाती हैं कि संपूर्ण 24.62 एकड़ क्षेत्र को 1950 से 1995 तक लगातार तालाब के रूप में दर्ज किया गया था।

26. यह पट्टा 1940 में आठ महीने के लिए दिया गया था। उपरोक्त अवधि के लिए पट्टा जुलाई से अक्टूबर तक वर्षा ऋतु को छोड़कर दिया गया था और साक्ष्य से पता चलता है कि यह भूमि तालाब का हिस्सा थी। इसलिए, हमें वादी-उत्तरदाता की ओर से इस तर्क को अस्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है कि यह भूमि तालाब का हिस्सा नहीं थी।

27. अब, हम इस प्रश्न पर आते हैं कि क्या ऐसी भूमि पर कोई अधिकार प्राप्त किया जा सकता है। जब हम 1908 के अधिनियम में निहित प्रासंगिक प्रावधानों और धारा 3(15) के तहत रैयत और धारा 3(16) के तहत रैयती भूमि की परिभाषा पर विचार करते हैं, तो वही नीचे उद्धृत किया गया है:

"धारा 3 (15) - "रैयत" से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जो कृषि के प्रयोजन से किसी संपदा में रैयती भूमि को इस शर्त पर धारण करता है कि वह भूस्वामी को उस पर कानूनी रूप से देय किराया अदा करेगा।"

स्पष्टीकरण:

जो व्यक्ति बारह वर्षों की निरंतर अवधि के लिए रैयत भूमि पर कब्जा रखता है, उसे इस अधिनियम के सभी प्रयोजनों के लिए रैयत माना जाएगा।

धारा 3 (16)- "रैयती भूमि" से तात्पर्य किसी संपदा में कृषि योग्य भूमि से है निजी भूमि के अतिरिक्त, लेकिन इसमें शामिल नहीं है;

(क) तालाबों और आपूर्ति, जल निकासी, अधिशेष या सिंचाई नहरों के तल और मेड़:

(ख) खलिहान, पशु-आश्रय, ग्राम-स्थल और अन्य भूमि किसी संपदा में स्थित जो ग्रामीणों के सामान्य उपयोग के लिए अलग रखी गई हो।

(ग) सेवा अवधि पर दी गई भूमि, चाहे वह किराया मुक्त हो या इस अधिनियम के पारित होने से पहले दी गई हो तो अनुकूल दरों पर या किराए पर, या उस तिथि के बाद दी गई हो तो किराया मुक्त, जब तक सेवा अवधि बनी रहती है।

28. धारा 3(15) के अंतर्गत परिभाषित 'रैयत' की परिभाषा से स्पष्ट है कि इसका अर्थ है वह व्यक्ति जो कृषि के प्रयोजन से भूमि धारण करता है। ऐसे 'रैयत' के लिए किसी संपदा में 'रैयती भूमि' धारण करना आवश्यक है। धारा 3(16) में रैयती भूमि को निजी भूमि के अतिरिक्त किसी संपदा में कृषि योग्य भूमि के रूप में परिभाषित किया गया है, लेकिन इसमें तालाबों और आपूर्ति, जल निकासी, अधिशेष या सिंचाई नहरों के मेड़ और तटबंध शामिल नहीं हैं। इस प्रकार, चूंकि विचाराधीन क्षेत्र तालाब का हिस्सा था, इसलिए धारा 3(16) में दी गई परिभाषा के अनुसार यह स्पष्ट रूप से रैयती भूमि नहीं थी। अतः, पूर्ववर्ती हितधारक - एस. विजयरांगा मुदलियार या वादी को 'रैयत' भूमि धारण करने वाला 'रैयत' नहीं कहा जा सकता।

29. 1948 के अधिनियम में निहित प्रावधानों को कृषि सुधार लाने और बिचौलियों, जमींदारों और जागीरदारों आदि को समाप्त करने के लिए अधिनियमित किया गया है। वास्तव में, संविधान के अनुच्छेद 39 (ख) और (ग) के अनुसार, उन्मूलन अधिनियम के अधिनियमन द्वारा कई कृषि सुधार हुए हैं। अधिनियम की धारा 3 में निहित प्रावधानों के अनुसार, अधिसूचना जारी होने पर, अधिसूचित तिथि से कुछ परिणाम स्वतः ही लागू हो जाते हैं। धारा 3(ख) में

प्रावधान है कि संपूर्ण संपदा, जिसमें सभी सामुदायिक भूमि; पोरंबोक, रैयती भूमि को छोड़कर; नदियाँ और धाराएँ; तालाब और ऊरानी (निजी तालाब और ऊरानी तथा सिंचाई कार्य आदि सहित) शामिल हैं, सरकार को हस्तांतरित हो जाएगी और सभी बाधाओं से मुक्त होकर सरकार में निहित हो जाएगी।

धारा 3 को नीचे उद्धृत किया गया है: “धारा 3: अधिसूचित तिथि से प्रभावी और अधिसूचित तिथि से तथा इस अधिनियम में अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रावधानित होने के अलावा:

- (क) तमिलनाडु भू संपदा (किराया कटौती) अधिनियम, 1947 तमिलनाडु अधिनियम XXX, 1947 [जहां तक यह संबंधित है] किराया कटौती और किराया बकाया वसूली के अलावा अन्य मामलों से संबंधित है और तमिलनाडु स्थायी बंदोबस्ती विनियमन, 1802 तमिलनाडु विनियमन XXV 1802, तमिलनाडु भू संपदा अधिनियम, 1908 तमिलनाडु अधिनियम 1, 1908, और संपदा पर लागू होने वाले अन्य सभी अधिनियम संपदा पर लागू होने के संबंध में निरस्त माने जाएंगे।
- (ख) संपूर्ण संपदा, जिसमें सभी सामुदायिक भूमि; पोराम्बोक; अन्य गैर-रैयती भूमि; बंजर भूमि; चारागाह भूमि; लंका भूमि; वन; खानें और खनिज; खदानें; नदियाँ और धाराएँ; तालाब और ऊराणी (निजी तालाब और ऊराणी तथा सिंचाई कार्य सहित) मत्स्य पालन और नाला, सरकार को हस्तांतरित हो जाएँगी और सभी भारों से मुक्त होकर सरकार में निहित हो जाएँगी और तमिलनाडु राजस्व वसूली अधिनियम, 1864, तमिलनाडु सिंचाई उपकरण अधिनियम, 1965, और रैयतवारी क्षेत्रों पर लागू होने वाले अन्य सभी अधिनियम संपत्ति पर लागू होंगे;
- (ग) अधिसूचित तिथि से पहले मुख्य भूस्वामी या किसी अन्य भूस्वामी द्वारा संपत्ति में या उस पर सृजित सभी अधिकार और हित, सरकार के विरुद्ध समाप्त हो जाएंगे;
- (घ) सरकार, किसी भी बाधा को दूर करने के बाद, जो प्रस्तुत की जा सकती है, संपत्ति पर तत्काल कब्जा कर सकती है, और संपत्ति से संबंधित सभी

खाते, पुस्तिका, पट्टा, मुचिलिका, नक्शे, योजनाएं और अन्य दस्तावेज जो सरकार को उसके प्रशासन के लिए आवश्यक हों;

बशर्ते कि सरकार किसी भी व्यक्ति को उस संपत्ति की किसी भी भूमि से बेदखल नहीं करेगी जिसके संबंध में सरकार का मानना है कि वह व्यक्ति प्रथम दृष्टया रैयतवारी पट्टा का हकदार है-

- (i) यदि ऐसा व्यक्ति रैयत है, तो बंदोबस्ती अधिकारी के निर्णय लंबित रहने तक कि क्या वह वास्तव में ऐसे पट्टे का हकदार है;
- (ii) यदि ऐसा व्यक्ति भूमिधारक है और बंदोबस्त अधिकारी तथा न्यायाधिकरण द्वारा अपील पर, यदि कोई हो, इस संबंध में निर्णय लंबित है कि क्या वह वास्तव में ऐसे पट्टे का हकदार है;
- (ड) प्रधान या कोई अन्य भूस्वामी और कोई अन्य व्यक्ति, जिनके अधिकार खंड (बी) के अधीन हस्तांतरित हो जाते हैं या खंड (सी) के अधीन समाप्त हो जाते हैं, केवल उन्हीं अधिकारों और विशेषाधिकारों के हकदार होंगे जो इस अधिनियम द्वारा या इसके अधीन उन्हें मान्यता प्राप्त हैं या प्रदान किए गए हैं।
- (च) भूस्वामी और रैयत का संबंध, उनके बीच, समाप्त हो जाएगा;
- (छ) अधिसूचित तिथि से पहले किसी व्यक्ति को संपत्ति में प्राप्त कोई भी अधिकार और विशेषाधिकार, मुख्य भूस्वामी या किसी अन्य भूस्वामी के विरुद्ध, समाप्त हो जाएंगे और सरकार या ऐसे भूस्वामी के विरुद्ध लागू नहीं होंगे। ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को केवल ऐसे ही अधिकार और विशेषाधिकार प्राप्त होंगे जो इस अधिनियम द्वारा या इसके अंतर्गत उसे मान्यता प्राप्त या प्रदान किए गए हैं।

30. धारा 3(सी) में यह भी प्रावधान है कि अधिसूचित तिथि से पहले मुख्य भूस्वामी या किसी अन्य भूस्वामी द्वारा संपत्ति में या उस पर सृजित सभी अधिकार और हित सरकार के विरुद्ध समाप्त हो जाएंगे।

31. यह स्पष्ट है कि 1948 के अधिनियम की धारा 3 के तहत निहित होना वैधानिक प्रावधानों के आधार पर स्वतः होता है और सरकार धारा 3 (क) के तहत प्रदान किए गए अनुसार ही कब्जा लेने के लिए सशक्त है। धारा 3 (घ) के परंतुक में यह छूट है कि यदि कोई व्यक्ति प्रथम दृष्टया रैयतवारी पट्टा का हकदार है और उसके आवेदन के लंबित रहने के

दौरान, बंदोबस्ती के लिए, उसे बेदखल नहीं किया जाएगा। भूमिधारक के मामले में, यह प्रावधान है कि यदि बंदोबस्ती अधिकारी और अपील न्यायाधिकरण के समक्ष निर्णय लंबित है, तो राज्य को कब्जा लेने से पहले प्रथम दृष्टया यह विचार करना होगा कि क्या भूमिधारक रैयत पट्टा का हकदार है। 1948 के अधिनियम की धारा 3(एफ) में स्पष्ट रूप से दिए गए प्रावधान के अनुसार, निहित होने का एक अन्य परिणाम यह है कि भूमिधारक और रैयत के बीच का संबंध समाप्त हो जाएगा।

32. 1948 के अधिनियम की धारा 3(जी) में विशेष रूप से यह प्रावधान है कि अधिसूचित तिथि से पहले किसी व्यक्ति को संपत्ति में प्राप्त हुआ कोई अधिकार सरकार के विरुद्ध लागू नहीं होगा और ऐसा व्यक्ति केवल उन्हीं अधिकारों और विशेषाधिकारों का हकदार होगा जो उसे 1948 के अधिनियम के तहत मान्यता प्राप्त हैं या प्रदान किए गए हैं।

33. धारा 11 किसी जागीर में रैयत के उस अधिकार से संबंधित है जिसके तहत वह रैयत की भूमि के संबंध में रैयतवारी पट्टा के लिए आवेदन कर सकता है, जिसे विधिवत रूप से उसकी जोत में शामिल किया गया था या उसकी जोत में विधिवत रूप से शामिल किया जाना चाहिए था।

34. धारा 11 को नीचे उद्धृत किया गया है:

“वे भूमियाँ जिनमें रैयत रैयतवारी पट्टा के हकदार हैं:

“11. किसी जागीर में प्रत्येक रैयत अधिसूचित तिथि से प्रभावी रूप से निम्नलिखित के संबंध में रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने का हकदार होगा;

(क) वे सभी रैयती भूमियाँ जो अधिसूचित तिथि से ठीक पहले उनके जोत में विधिवत रूप से शामिल थीं या विधिवत रूप से शामिल की जानी चाहिए थीं और जो न तो लंका भूमियाँ हैं और न ही ऐसी भूमियाँ हैं जिनके संबंध में किसी भूस्वामी या किसी अन्य व्यक्ति को इस अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान के तहत रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने का अधिकार है; और

(ख) अधिसूचित तिथि से ठीक पहले उसके कब्जे में रही लंका की सभी भूमि, ऐसी भूमि जो 1 जुलाई 1939 से लगातार उसके या उसके पूर्ववर्तियों के कब्जे में रही हो।

बशर्ते कि कोई भी व्यक्ति जिसे 1 जुलाई 1945 को या उसके बाद किसी भूस्वामी द्वारा किसी भूमि पर कब्जा दिया गया हो, उसे, सिवाय उस स्थिति में जब

सरकार, सभी परिस्थितियों की जांच के बाद, अन्यथा निर्देश दे, ऐसी भूमि के संबंध में रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने का हकदार नहीं होगा।

स्पष्टीकरण: लंका की किसी भी भूमि का कोई भी पट्टेदार और कोई भी व्यक्ति जिसे अधिसूचित तिथि से पहले किसी भूमि का किराया वसूलने का अधिकार पट्टा दिया गया हो, जिसमें इजारेदार या किरायादार किसान भी शामिल हैं, इस धारा के तहत ऐसी भूमि के संबंध में रैयतवारी पट्टा का हकदार नहीं होगा।"

35. धारा 12 जमींदारी संपदा में भूस्वामी के अधिकार से संबंधित है और धारा 13 इनाम संपदा में भूस्वामी के अधिकार से संबंधित है, जिससे वर्तमान मामले में हमारा कोई संबंध नहीं है। वादी ने रैयत के रूप में अधिकार, हक और हित का दावा किया है, न कि भूस्वामी के रूप में।

36. धारा 14-ए को संशोधन अधिनियम 49, 1974 द्वारा जोड़ा गया था। धारा 14-ए में निहित प्रावधान नीचे दिए गए हैं;

"निजी तालाब या ऊरानी के संबंध में रैयतवारी पट्टा प्रदान नहीं किया जाएगा:

14-ए.(1) इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, किसी निजी तालाब या ऊरानी के संबंध में कोई रैयतवारी पट्टा प्रदान नहीं किया जाएगा।

(2) इस अधिनियम के अंतर्गत किसी निजी तालाब या ऊरानी के संबंध में तमिलनाडु संपदा (उन्मूलन एवं रैयतवारी में रूपांतरण) संशोधन अधिनियम, 1974 के तमिलनाडु सरकार राजपत्र में प्रकाशन की तिथि से पूर्व दिया गया कोई रैयतवारी पट्टा रद्द माना जाएगा, और इस अधिनियम के अंतर्गत मुआवजे के प्रयोजनों के लिए निजी तालाब या ऊरानी को ऐसी भूमि माना जाएगा जिसके संबंध में न तो भूस्वामी और न ही कोई अन्य व्यक्ति इस अधिनियम के अंतर्गत रैयतवारी पट्टा का हकदार है।

37. धारा 14-ए(1) यह स्पष्ट करती है कि इस अधिनियम में किसी भी बात के होते हुए भी, किसी निजी तालाब या ऊरानी के संबंध में कोई रैयतवारी पट्टा प्रदान नहीं किया जाएगा। यदि कोई पट्टा प्रदान किया गया है, तो वह रद्द माना जाएगा और निजी तालाब या ऊरानी की भूमि को भूमिधारक की भूमि नहीं माना जाएगा और न ही कोई अन्य व्यक्ति इस अधिनियम के तहत रैयतवारी पट्टा का हकदार है।

38. 1908 के अधिनियम की धारा 3(15) और 3(16) में निहित प्रावधानों और 1948 के अधिनियम की धारा 3, 11 और 14-ए में निहित प्रावधानों के संयुक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि तालाब की भूमि 'रैयती भूमि' नहीं है, इसलिए किसी व्यक्ति को 'रैयत' का कोई अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता है, जब वह वर्ष में 8 महीने के लिए अस्थायी पट्टे पर भूमि धारण करता है, जबकि तालाबों में पानी नहीं होता है। उपर्युक्त प्रावधानों के तहत ऐसे निकायों को संरक्षण प्राप्त है, जो 1908 और 1948 के अधिनियमों के अंतर्गत बनाए गए हैं। 1974 में धारा 14-ए में किए गए संशोधन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि किसी भी पदाधिकारी को निजी तालाब या ऊराणियों के संबंध में भी कोई रैयत पट्टा दिया गया है, तो वह निष्क्रिय हो जाएगा और रद्द माना जाएगा।

39. इस मामले में यह स्पष्ट है कि न केवल एस. विजयरांगा मुदलियार, जो वादी के विक्रेता थे, ने अधिनियम 1948 की धारा 11 के प्रावधानों के तहत पट्टा देने के लिए आवेदन किया था, बल्कि मूल वादी ने भी यही प्रार्थना चार बार की थी, लेकिन वह असफल रही थी। 1953, 1968, 1971, 1982 और 1994 में की गई सभी प्रार्थनाएँ अस्वीकृत कर दी गई थीं। यह निर्विवाद है कि रैयतवारी पट्टा नहीं दिया गया था। 1973 में पुनर्विचार याचिका को अस्वीकृत करते हुए पारित आदेश में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि भूमि तालाब में शामिल है और यह क्षेत्र जलमग्न होने योग्य था और सिंचाई तालाब का हिस्सा था। मूल वादी का दावा खारिज हो जाने के बाद, उसके लिए अपने अधिकारों को स्थापित करने हेतु मुकदमा दायर करना अनिवार्य था। वह 1953 में याचिका खारिज होने के बाद 1984 तक प्रतीक्षा नहीं कर सकता था। फिर, 1968 में अस्वीकृति आदेश पारित होने और 11.5.1971 को पुनः अस्वीकृति आदेश पारित होने के बाद दिसंबर 1984 तक प्रतीक्षा नहीं कर सकता था, और पुनरावलोकन याचिका 7.5.1973 को खारिज कर दी गई थी। रैयतवारी पट्टा न दिए जाने की स्थिति में और वैसे भी, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि भूमि सार्वजनिक उपयोग के लिए आरक्षित तालाब का हिस्सा थी, वादी को रैयतवारी पट्टा का दावा करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं हुआ, क्योंकि उसका पूर्वज रैयत नहीं था और विवादित भूमि रैयती भूमि नहीं थी। इसके अलावा, वादी के विक्रेता ने लगातार 12 वर्षों तक भूमि पर अधिकार नहीं रखा था, इसलिए न तो विक्रेता को और न ही वादी को कोई अधिकार, स्वामित्व या हित प्राप्त हुआ। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने ही 1908 के अधिनियम और 1948 के अधिनियम के प्रावधानों में निहित उपरोक्त निषेध की अनदेखी करके स्पष्ट रूप से गैरकानूनी काम किया है।

40. कब्जे के प्रश्न पर आते हुए, उच्च न्यायालय ने 12.1.1951 को कब्जा लेने की बी-9 कार्यवाही को खारिज कर दिया है। हालांकि, कब्जा लेने के तथ्य पर संदेह करने का कोई कारण नहीं था। यह भी स्पष्ट है कि भूमि एक तालाब का हिस्सा थी जो जुलाई से अक्टूबर तक बारिश के दौरान जलमग्न हो जाती थी, इसलिए इस पर निरंतर कब्जा संभव नहीं था। वादी के विक्रेता को किसी भी समय पूरे वर्ष के लिए कोई पट्टा नहीं दिया गया था, यह नवंबर से जून तक था। चार वर्षों की अवधि के लिए चार पट्टा विलेख 32 महीनों के लिए हैं, यानी प्रत्येक वर्ष 8 महीने, जो 1940, 1942, 1943 और 1946 के अभिलेखों में दर्ज हैं। कोई अन्य पट्टा प्रस्तुत नहीं किया गया है जो यह दर्शाता हो कि वह 12 वर्षों से भूमि धारण कर रहा था या भूमि का कोई पट्टा 1948 के अधिनियम के लागू होने की तिथि या निर्धारित दिन पर था। यहां तक कि विक्रेता के पास भी भूमि का कब्जा नहीं था, क्योंकि 12.1.1951 को जारी अधिसूचना के अनुसार, गाँव की पूरी संपत्ति राज्य के अधीन थी और कब्जा ले लिया गया था। इसलिए, यह मानने का कोई आधार नहीं था कि वादी के विक्रेता के पास कब्जा बना रहा। 1952 में पचियाप्पन द्वारा खरीद किए जाने के बाद, अभिलेख में एक भी राजस्व प्रविष्टि दर्ज नहीं है जो यह दर्शाती हो कि वह कभी भी कब्जे में रहा हो या उसने भूमि पर खेती की हो। दूसरी ओर, इसके विपरीत कई दस्तावेज अपीलकर्ता द्वारा अभिलेख में प्रस्तुत किए गए हैं।

41. सबसे पहले, बंदोबस्ती पुस्तिका की प्रतियां मौजूद हैं जो दर्शाती हैं कि नए सर्वेक्षण संख्या 163 में शामिल भूमि पुराने सर्वेक्षण संख्या 779 के अनुरूप है और इसे आम उपयोग के लिए पोराम्बोक (साझा भूमि) के रूप में दर्ज किया गया है। संपूर्ण क्षेत्र 24.62 एकड़ को पोराम्बोक के रूप में दर्ज किया गया था। एक और बंदोबस्ती प्रविष्टि 1959 की है जिसमें दर्ज है कि सर्वेक्षण संख्या 163 को 779 में से 24.62 एकड़ क्षेत्र में अलग किया गया था और इस क्षेत्र को अचुवेरी यानी झील और पोराम्बोक यानी आम उपयोग के लिए दर्ज किया गया है। दस्तावेज में यह तथ्य दर्ज है कि पचियाप्पन के रैयतवारी पट्टा प्रदान करने के आवेदन को 5.11.1968 को अस्वीकार कर दिया गया था। गाँव के सर्वेक्षण मानचित्र में यह भी दर्ज है कि पुराना सर्वेक्षण क्रमांक 779 राज्य के अधीन आ चुका है। जब हम प्रदर्श बी-13, फसली 1379 = 1969 (ग्रेगोरियन वर्ष) पर विचार करते हैं, तो भूमि को चिन्नेरी (छोटी झील) के रूप में दर्ज किया गया है। टिप्पणी स्तंभ में कई व्यक्तियों का कब्जा अतिक्रमणकारी के रूप में दर्ज है, लेकिन वादी - पचियाप्पन का नहीं। विभिन्न फ़सली प्रविष्टियों में भी यही स्थिति है: फ़सली 1380 = 1970, 1381 = 1971, 1382 = 1972, 1383 = 1973, 1384 = 1974, 1386 =

1976, 1390 = 1980, 1391 = 1981 से लेकर 1405 = 1995 तक। टिप्पणी स्तंभ में दर्ज प्रविष्टियाँ न तो स्वामित्व दर्शाती हैं और न ही किरायेदारी, जैसा कि इस न्यायालय ने *बयोहर राजेंद्र सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य*, 1970 आरएन 16 (सर्वोच्च न्यायालय) में अवलोकन किया है।

42. अन्य दस्तावेज़ भी अभिलेख में रखे गए हैं जो यह दर्शाते हैं कि क्षेत्र सार्वजनिक उपयोग की चिन्नेरी (झील) है। इस प्रकार, उच्च न्यायालय के पास प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए कब्जे के निष्कर्ष को अपास्त करने और 1951 में कब्जे के बी-9 को खारिज करने के लिए कोई भी सामग्री या आधार उपलब्ध नहीं था, क्योंकि यह संबंधित राजस्व प्रविष्टियों द्वारा समर्थित था और ऐसी प्रविष्टियों से सत्यता की वैधानिक धारणा जुड़ी हुई है, हालांकि ऐसी धारणा खंडनीय है। हालांकि, वादी द्वारा अभिलेख में ऐसा कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है जो अधिकार अभिलेख के दस्तावेज़ की सत्यता की वैधानिक धारणा का खंडन कर सके। इस प्रकार, विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने ही अनुचित ढंग से कार्य किया है, जब उन्होंने केवल इस आधार पर पर्याप्त साक्ष्यों को खारिज कर दिया कि दस्तावेज़ ए-1 से ए-4 सिद्ध हो चुके हैं। उच्च न्यायालय वादी के पक्ष में निष्कर्ष नहीं निकाल सकता था, क्योंकि उपर्युक्त दस्तावेज़ ए-1 से ए-4 के आधार पर वादी या उसके पूर्वज को कोई अधिकार प्राप्त नहीं हुआ था। उच्च न्यायालय ने दस्तावेज़ ए-1 से ए-4 की प्रामाणिकता का निष्कर्ष देने के लिए अनावश्यक रूप से प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला है। हम इन दस्तावेज़ों को सिद्ध मानते हैं और इसी आधार पर मामले की कार्यवाही शुरू करते हैं।

43. जब हम दस्तावेज़ ए 1 से ए 4 पर विचार करते हैं, जिन्हें सिद्ध मान लिया गया है, तो वे न केवल वादी द्वारा समर्थित दावे को आगे बढ़ाने में विफल रहते हैं, बल्कि उसका खंडन करते हैं। प्रदर्श ए 2 वादी द्वारा अभिलेख में प्रस्तुत किए गए चार पट्टे हैं, जो एस. विजयरांगा मुदलियार के पक्ष में पूर्ववर्ती हित के रूप में 1940, 1942, 1943 और 1946 में प्रदान किए गए थे। पट्टा विलेख में ही यह दर्ज है कि भूमि तालाब में समाहित थी और तालाब का हिस्सा थी। इस प्रकार, उक्त भूमि पर वादी को कोई अधिकार, स्वामित्व या हित प्राप्त नहीं हो सकता था।

44. इसके अलावा, जब हम एस. विजयरांगा मुदलियार द्वारा मूल वादी पचियाप्पा के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख ए-1 पर विचार करते हैं, तो विक्रय विलेख में यह उल्लेख है कि यद्यपि पट्टा उनके नाम पर जारी किया गया था, वे न तो खेती कर सकते थे और न ही

उसकी देखभाल करने में सक्षम थे, अतः उन्होंने भूमि बेचने का निर्णय लिया है। प्रदर्श ए-3 फसली 1369 = 1959 के किराया पुस्तिका में केवल किराया दर्ज है, एस. विजयरांगा मुदलियार द्वारा पट्टे, कब्जे या खेती का कोई उल्लेख नहीं है। ए-4 वर्ष 1949 का दस्तावेज है जिसमें एस. विजयरांगा मुदलियार का नाम दर्ज है, लेकिन इसमें एस. विजयरांगा मुदलियार द्वारा की गई किसी भी खेती का कोई अभिलेख नहीं है। इसमें केवल भूमि पर लगने वाले उपकर की राशि दर्ज है। वर्ष 1949 के भूमि उपकर या भू-राजस्व की राशि के दर्ज होने के आधार पर वादी के विक्रेता के पक्ष में कोई मामला नहीं बनता है। केवल वर्ष 1949 में उपकर या राजस्व दर्ज करना या यह मान लेना कि विक्रेता ने इसे 1949 में भुगतान किया था, विक्रेता को स्वामित्व प्रदान नहीं करता है, विशेषकर तब जब वह क्षेत्र तालाब में शामिल था। यदि 1947 से 1949 की अवधि के लिए कोई पट्टा दिया गया होता, तो उसे अभिलेख में दर्ज किया जाना चाहिए था, लेकिन चार साल के पट्टे को छोड़कर ऐसा कोई पट्टा विलेख अभिलेख में दर्ज नहीं किया गया है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा कब्जे के संबंध में दिया गया निर्णय स्पष्ट रूप से गलत और राजस्व अभिलेखों तथा 1951 में जारी राज्य में भूमि के निहित होने की राजपत्र अधिसूचना के विपरीत है।

45. इसमें कोई संदेह नहीं है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के तहत, किसी स्थिति के एक बार कायम रहने के बाद उसके जारी रहने का अनुमान होता है। न्यायालय के लिए धारा 114 के तहत किसी भी तथ्य की निरंतरता का अनुमान लगाना खुला है, बशर्ते वह एक बार कायम रहा हो। निरंतरता का ऐसा अनुमान न केवल आगे के लिए बल्कि पीछे के लिए भी लगाया जा सकता है। न्यायालय यह अनुमान लगा सकता है कि ऐसी स्थिति अतीत में भी रही होगी, जब तक कि उसकी निरंतरता टूटना साबित न हो जाए। वर्तमान मामले में, अभिलेख पर राजस्व अभिलेख के रूप में किसी भी सकारात्मक साक्ष्य द्वारा यह नहीं दिखाया गया है कि उन्मूलन की तिथि पर वादी का विक्रेता कब्जे में था और उसके बाद वादी किसी भी समय कब्जे में रहा था। इस न्यायालय ने *सर भीमेश्वरा स्वामी वारू टेम्पल बनाम पेडापुडी कृष्णा मूर्ति और अन्य*, एआईआर 1973 एससी 1299 में यह टिप्पणी की है कि किसी छिटपुट प्रविष्टि से ऐसा कोई अनुमान नहीं उठता है। दूसरी ओर, वादी और उसके विक्रेता द्वारा रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने के लिए किए गए लगातार पांच प्रयास विफल रहे क्योंकि ऐसी भूमि में न तो कोई अधिकार मौजूद था और न ही अर्जित हुआ था। वादी रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने में विफल रहने के कारण और वैसे भी भूमि तालाब का हिस्सा होने के कारण, रैयत माने जाने की पात्रता साबित करने में

विफल रहा है। वादी को कोई भी रैयतवारी पट्टा प्राप्त करने या वाद में डिक्री प्राप्त करने का कोई अधिकार, हक या हित अर्जित नहीं हुआ है।

46. अपीलकर्ता की ओर से हमारे समक्ष यह तर्क दिया गया कि परिसीमा अधिनियम 1963 के अनुच्छेद 58 में निहित प्रावधानों के अनुसार मुकदमा परिसीमा से बाधित है। मुकदमा तीन वर्ष के भीतर दायर किया जाना आवश्यक था। हमें इस प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। हमने योग्यता के आधार पर पाया है कि वादी के पक्ष में कोई मामला नहीं बनता है। इसलिए, वह किसी भी प्रकार की अनुतोष का हकदार नहीं है।

47. उच्च न्यायालय ने क्षेत्रफल में अंतर के एक अन्य पहलू पर विचार किया है। उच्च न्यायालय ने राय दी है कि पहले ऐसा प्रतीत होता था कि भूमि 15.00 एकड़ थी, लेकिन बाद में क्षेत्रफल बढ़कर 24.62 एकड़ कैसे हो गया, इसका स्पष्टीकरण उत्तरदाताओं द्वारा नहीं दिया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया उपरोक्त तर्क पूरी तरह से महत्वपूर्ण पहलुओं और साक्ष्यों की अज्ञानता पर आधारित है। वास्तव में, पहले विवादित भूमि सर्वेक्षण संख्या 779 में शामिल थी, जो नए सर्वेक्षण संख्या 163 के अनुरूप 24.67 एकड़ में फैली हुई है। यह क्षेत्रफल शुरू से ही राजस्व दस्तावेजों और बंदोबस्ती पुस्तिका में लगातार दर्ज है। 1948 से 1995 तक, वादी द्वारा क्षेत्र में असमानता दर्शाने वाला कोई ठोस दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को सही मानते हुए भी, यह समझना मुश्किल है कि इससे वादी के मामले को कैसे सहायता मिलती है। वादी केवल अपने मामले की मजबूती के बल पर ही सफल हो सकता है, और जब उसके विक्रेता को तालाब के क्षेत्र में अस्थायी पट्टे दिए गए थे, जैसा कि पट्टा विलेख में उल्लेख किया गया था और जो सामान्य उपयोग के लिए आरक्षित था, तो कोई अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता था। उच्च न्यायालय ने इस महत्वपूर्ण पहलू को अनदेखा कर दिया है। यदि क्षेत्रफल 15 एकड़ से बढ़कर 24.62 एकड़ हो गया है और यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि वादी जल निकाय के हिस्से वाली भूमि पर किसी भी प्रकार का अधिकार कैसे जता सकता है, तो यह समझ से परे है, क्योंकि वादी का मामला उपरोक्त विसंगति से बिल्कुल भी समर्थित नहीं है, भले ही वह मौजूद हो। इसके अलावा, 24.63 एकड़ का पूरा क्षेत्र चिन्नेरी (तालाब) और पोराम्बोक अर्थात् आम उपयोग के लिए के रूप में दर्ज किया गया है।

48. अब हम वादी की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा उठाए गए अंतिम आधार पर विचार करते हैं, जो 1948 के अधिनियम की धारा 64 में निहित प्रावधानों पर आधारित है।

धारा 64 स्वामी के अस्थायी बेदखली/कब्जे के समापन से अप्रभावित रहने के अधिकार से संबंधित है। धारा 64 का अंश नीचे दिया गया है:

“अस्थायी रूप से कब्जे या कब्जे के समाप्त होने से स्वामी या कब्जेदार के अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा:

64. जहाँ कोई व्यक्ति-

(क) अधिसूचित तिथि से ठीक पहले किसी भूमि या भवन के स्वामित्व या कब्जे या अधिभोग का हकदार है, लेकिन उसने अपने कब्जे या अधिभोग के अधिकार को हस्तांतरित कर दिया है या उसे अस्थायी रूप से बेदखल कर दिया गया है या उसके कब्जे के अधिकार से वंचित कर दिया गया है; और

(ख) उस तिथि को उसने ऐसी भूमि या भवन पर अपना कब्जा या अधिभोग पुनः प्राप्त करने का अधिकार नहीं खोया है;

इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, और इसके प्रावधानों के अधीन रहते हुए, उसे ऐसी भूमि या भवन का स्वामी, या उस पर कब्जा रखने वाला, या अधिकार रखने वाला माना जाएगा;

बशर्ते कि ऐसी भूमि या भवन के स्वामित्व के अधिकार का कोई भी वैध हस्तांतरणकर्ता अपने हस्तांतरणकर्ता के इस अधिनियम के सभी अधिकारों का हकदार होगा।

49. धारा 64 यह पूर्वधारणा रखती है कि अधिसूचित तिथि से ठीक पहले कोई व्यक्ति किसी भूमि के स्वामित्व या कब्जे या अधिभोग का हकदार है। यदि उसे अस्थायी रूप से बेदखल कर दिया जाता है या उसके कब्जे के अधिकार से वंचित कर दिया जाता है, और उसने ऐसी भूमि या भवन का कब्जा पुनः प्राप्त करने का अधिकार नहीं खोया है, तो अधिनियम के प्रयोजन के लिए उसे ऐसी भूमि या भवन का स्वामी या कब्जेदार माना जाएगा।

50. 1948 के अधिनियम की धारा 64 में कानूनी प्रावधानों के संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता। यह कानून का स्थापित सिद्धांत है कि मालिक के अवैध रूप से बेदखल किए जाने या कब्जे के समाप्त होने की स्थिति में, अवैध रूप से कब्जा लेने वाले व्यक्ति का कब्जा ही वास्तविक मालिक का माना जाता है। लेकिन इस मामले में, धारा 64 के प्रावधान वादी के लिए कोई सहायक नहीं हैं, क्योंकि विक्रेता न तो भूमि का मालिक साबित हुआ है और न ही उसने निरसन की तिथि पर अपना कब्जा साबित किया है या यह कि कब्जा अवैध तरीके से समाप्त

किया गया था। विक्रेता के कब्जे में बने रहने का कोई अधिकार स्थापित नहीं हुआ है। अस्थायी पट्टों की अवधि समाप्त होने के बाद वादी के विक्रेता का कोई अधिकार, स्वामित्व या हित नहीं था। परिणामस्वरूप, भूमि में उनका कोई हस्तांतरणीय अधिकार नहीं था। अतः, पचियाप्पन को अपने पूर्ववर्ती से भूमि में कोई अधिकार, स्वामित्व या हित प्राप्त नहीं हुआ, क्योंकि उनका कोई अधिकार, स्वामित्व या हित नहीं था। वादी को व्युत्पन्न स्वामित्व सिद्ध करना था, जिसमें वे बुरी तरह विफल रहे। विक्रय विलेख में विक्रेता द्वारा उल्लेख किया गया था कि वे भूमि पर कब्जा करने में असमर्थ थे और न ही उस पर खेती कर सकते थे। स्पष्टतः, वादी का विक्रेता भूमि पर कब्जे में नहीं था। इसके अलावा, जैसा कि राजपत्र अधिसूचना से स्पष्ट है, राज्य सरकार ने 1951 में पूरी संपत्ति पर कब्जा कर लिया था और पूरे गांव की भूमि राज्य में निहित हो गई थी।

51. राज्य सरकार ने यह भूमि सलेम नगर पालिका को सौंप दी है, और इसका एक बड़ा हिस्सा अन्ना परिवहन निगम को बस पड़ाव के लिए दे दिया गया है। उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी की है कि नगर पालिका ने पूरी भूमि परिवहन निगम को क्यों नहीं दी, और परिणामस्वरूप वादी के पक्ष में यह निष्कर्ष निकाला है कि केवल भूमि का एक हिस्सा ही दिया गया है, और इस आधार पर उच्च न्यायालय वादी के पक्ष में निष्कर्ष नहीं निकाल सकता था, ताकि उसके अधिकार को पुष्ट किया जा सके। उच्च न्यायालय ने इस प्रकार का निष्कर्ष दर्ज करने में गंभीर त्रुटि की है। इस निष्कर्ष पर पहुंचने का कोई आधार नहीं था। उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण पूरी तरह से अस्वीकार्य, अस्थिर, विकृत और अवैध है।

52. अतः, हमें उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त करने और प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय को बहाल करने में कोई संकोच नहीं है। तीनों मुकदमे खारिज किए जाते हैं। चूंकि विभिन्न कार्यवाहियों की संख्या में वृद्धि हुई थी और तीन मुकदमे दायर किए गए थे, इसलिए हम वादी/उत्तरदाता पर एक लाख रुपये का जुर्माना लगाते हैं, जिसे दो महीने के भीतर सर्वोच्च न्यायालय के अभिलेख पर अधिवक्ता संगठन के कल्याण कोष में जमा करना होगा और रसीद रजिस्ट्री में दाखिल करनी होगी।

53. अपीलें स्वीकार की जाती हैं।

निधि जैन

अपीलें स्वीकार की जाती हैं।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।